Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

ईशोपनिषद् : एक दार्शनिक विश्लेषण

डॉ. सुमन
सहायक आचार्य (संस्कृत), आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी
Email: sarichwal@gmail.com

सारः ईशोपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद का 40वाँ अध्याय है और यह संक्षिप्त रूप मे समग्र वेदांत-दर्शन का सार प्रस्तुत करता है। यह शोध-पत्र ईशोपनिषद् के 18 मंत्रों में निहित ब्रह्मविद्या के स्वरूपए सिद्धांतए साधन तथा फल का दार्शनिक एवं व्यावहारिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। मानव जीवन को जन्म और मृत्यु के मध्य स्थित एक चक्रवत् यात्रा मानते हुएए यह अध्ययन दिखाता है कि जीवन का रहस्य केवल बाह्य जगत की खोज से नहीं, बल्कि अंतर्मुखता और आत्म-मीमांसा के माध्यम से ही प्रकट हो सकता है।

ईशोपनिषद् के प्रथम तीन मंत्रों में व्यक्त ब्रह्मविद्या का स्वरूप त्याग और उपभोग के समन्वयए ईश्वर की सर्वव्यापकता तथा निष्काम कर्म के सिद्धांत के रूप में उभरता है। आगे के मंत्रों (4.8) में आत्मा की अजर-अमरए अविनाशी एवं सर्वव्यापी सत्ता तथा योगी की ब्रह्म-दृष्टि का प्रतिपादन किया गया है। तृतीय खंड (9. 14) में विद्या (आत्मज्ञान) और अविद्या (कर्म/उपासना) के संतुलन की अनिवार्यता को स्थापित किया गया है। अंतिम खंड (15.18) मृत्यु के रहस्य, माया के स्वर्णमय आवरणए ब्रह्म–ऐक्य-भाव तथा अमृतत्व की प्राप्ति का दार्शनिक विवेचन करता है।

अध्ययन से निष्कर्ष रूप में प्रतिपादित होता है कि ईशोपनिषद् केवल सैद्धांतिक ग्रंथ नहींए बल्कि जीवन जीने की एक संतुलितए वैज्ञानिक एवं साधनामय पद्धति प्रस्तुत करता है, जहाँ ज्ञान और कर्म का समन्वयए निष्काम भावए इंद्रियनिग्रह तथा प्राण-साधना के माध्यम से मनुष्य मृत्यु-भय से परे अमृतत्व और निर्भयता की अनुभूति तक पहुँच सकता है।

मुख्य शब्द : ईशोपनिषद्, ब्रह्मविद्या, विद्या–अविद्या, अद्वैत, निष्काम कर्म, साधना, मोक्ष, मृत्यु-दर्शन, ब्रह्म–ऐक्य भाव

परिचय :. मानव जीवन का अस्तित्व किसी एक क्षण की घटना नहीं है बल्कि जन्म और मृत्यु के रहस्यपूर्ण बिंदुओं के मध्य स्थित एक सीमित, परिवर्तनशील और गतिशील यात्रा है। मानव जीवन का अस्तित्व एक अदृश्य आधार की उत्पत्ति है जिसे दर्शन की भाषा में शून्य' या पूर्ण ब्रह्म' के रूप में अभिहित किया जा सकता है। हमारे अस्तित्व का यह अनुभवजन्य सत्य द्वैत' हैए जहाँ व्यक्त जगत (दृश्यमान संसार) और उसका मूल

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

स्रोत (अव्यक्त ब्रह्म) एक होते हुए भी काल और परिस्थिति के सापेक्ष पृथक प्रतीत होते हैं। हमारा यह जीवन उस अव्यक्त ऊर्जा से निकलकर पुनः उसी में विलीन हो जाने की एक चक्रवत प्रक्रिया है।

यदि जीवन को एक दृष्टांत के माध्यम से समझा जाए, तो यह एक ऐसे पुरातन, हस्तलिखित ग्रंथ की भाँति है जिसके आदि (शुरुआत) और अंत के पन्ने लुप्त गए हैं। ये लुप्त हुए पन्ने ही हमारे अस्तित्व के सबसे बृहत रहस्य हैं—हम जन्म से पहले क्या थे? और मृत्यु के बाद क्या होंगे? इन खोए हुए पन्नों में ही हमारे अस्तित्व की उत्पत्ति (जीवन से पहले की अवस्था) और गंतव्य (मृत्यु के बाद की स्थिति) का रहस्य छिपा हुआ है और इन्हीं अज्ञात पृष्ठों में परम सत्य या मोक्षश विद्यमान है।

इन मूलभूत सत्यों का अन्वेषण, जिज्ञासा, तर्क और निरंतर चिंतन की यात्रा ही दर्शन' है। दर्शन केवल बौद्धिक विलास नहीं, बल्कि हमारे सूक्ष्म अस्तित्व के अर्थ को समझने का एक मानवीय प्रयास है। आधुनिक युग की विडंबना यह है कि आज का प्रबुद्ध प्राणी बाह्य जगत की खोज में इतना व्यस्त है कि वह स्वयं ही अपने लिए एक मौलिक प्रश्न बन गया है: जीवन क्या है?'। यह प्रश्न न तो भौतिकी की प्रयोगशाला में सुलझाया जा सकता है और न ही रसायन शास्त्र के मिश्रणों में। इसके लिए अंतर्मुखता' और आत्म-मीमांसा' ही वह अद्वितीय प्रयोगशाला है, जहाँ चेतना के प्रयोग किए जाते हैं। इसी आंतरिक प्रयोगशाला में जन्म से मृत्यु तक के सभी अनुभवए विचार और भावनाएँ घटित होती हैं, और यहीं हम अपने अस्तित्व के मूलभूत स्वरूप का अवलोकन कर सकते हैं।

हमारे ऋषि - मुनियों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया था, जिसे आज हम विस्मृत कर चुके हैं। परिणामतः, हम भौतिकवाद और क्षणिक उपभोग की उस मृगतृष्णा के पीछे भाग रहे हैं जो चिरकाल तक सुख से विमुख करती है। हमारे ऋषियों द्वारा प्राप्त उपनिषद्श इसी आंतरिक अनुसंधान का परिणाम हैं। उपनिषद्' शब्द का शाब्दिक और दार्शनिक अर्थ है—वह विद्या जिसके द्वारा ब्रह्म और आत्मा की एकात्मकता (ब्रह्मात्मभाव) को प्राप्त किया जाता है। अमरकोष के अनुसारए *धर्मे रहस्युपनिषत् स्यात्*'—अर्थात् धर्म के गुप्त रहस्यों को जो प्रकट करेए वह उपनिषद् है। यह केवल बुद्धि का विषय नहींए अपितु अनुभव का सत्य है। उपनिषद् न केवल व्यक्त जगतए बल्कि जन्म और मृत्यु से परे अव्यक्त जगत (ब्रह्म) का भी सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं और '*तत् त्वम् असि*'ए *अहं ब्रह्मास्मि*' जैसे महावाक्यों के माध्यम से मनुष्य को द्वैत से उठाकर अद्वैत की परम स्थिति तक ले जाने का मार्ग दिखाते हैं।

इन्हीं उपनिषदों में ईशोपनिषद् (या ईशावास्योपनिषद्) को ज्ञान की आधारशिला माना जाता है। यह अत्यंत लघु)18 मंत्र) है, किंतु समस्त वेदांत का मेरुदंड है। यह उपनिषद् '*ईशावास्यमिदं सर्वम्*...' के माध्यम से संपूर्ण

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

सृष्टि में ईश्वर की व्यापकता का उद्घोष करता है और '*तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा*' के माध्यम से त्यागपूर्वक भोग की जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करता हैए जहाँ ज्ञान (विद्या) और कर्म (अविद्या/उपासना) का समन्वय मुक्ति का पथ बन जाता है।

अध्ययन उद्देश्य रू . इस शोध-पत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं **:.**

1. **ब्रह्मविद्या के स्वरूप का विश्लेषण**
2. **ब्रह्मविद्या के सिद्धांतों की स्थापना**
3. **ब्रह्मविद्या के साधनों का विवेचन**
4. **ब्रह्मविद्या के फल और मृत्यु-दर्शन का अध्ययन**

अनुसंधान पद्धति रू. यह अध्ययन मुख्यतः **ग्रंथ-समीक्षा** और **दार्शनिक-व्याख्यात्मक** पद्धति पर आधारित है। इसमें ईशोपनिषद् के 18 मंत्रों का **शब्दार्थ, भावार्थ और प्रसंगानुसार विश्लेषण** किया गया है। विद्या–अविद्याए निष्काम कर्मए आत्मज्ञान और मृत्यु-दर्शन जैसे प्रमुख तत्त्वों का समन्वयात्मक तथा **तुलनात्मक अध्ययन** प्रस्तुत किया गया है। साथ हीए उपनिषद् के संदेश को केवल सिद्धांत के रूप में नहींए बल्कि **साधनाए ध्यान और आध्यात्मिक अनुशासन** की अनुभव-साध्य प्रक्रिया के रूप में भी समझने का प्रयास किया गया है।

1. ब्रह्मविद्या के स्वरूप का विश्लेषण *(ईशोपनिषद् मंत्र १–३)*

ईशोपनिषद् के प्रथम तीन मंत्रों में ब्रह्मविद्या के स्वरूप अर्थात् जीवन की मूल दृष्टि को वर्णित किया गया है। मानव जीवन के मूल प्रश्न — *हम यहाँ क्यों हैं? हमारा लक्ष्य क्या है? ब्रह्मविद्या के स्वरूप में त्याग और उपभोग का समन्वय कैसे संभव है?*'— इन मंत्रों में निहित है।

1.1 ब्रह्म की व्याप्तता और निष्काम कर्म का सिद्धांत

प्रथम मंत्र *ईशावास्यमिदं सर्वम्…*' यह उद्घाटित करता है कि यह संपूर्ण व्यक्त जगत ईश्वर से व्याप्त है। यही अद्वैत दर्शन का आधार स्तंभ है। जब मनुष्य को समस्त प्राणियों में ईश्वर का ही वास दिखाई देने लगता हैए तब वह किसी के भी प्रति ईर्ष्या, द्वेष और असूया का भाव नहीं रखता। इसी ब्रह्म-दृष्टि के साथ जीने की कला को ही ब्रह्मविद्या कहा गया है।

- **अभेद भावना** – अभेद भावना से युक्त होकर किए गए कर्तव्य ही निष्काम कर्म का स्वरूप ग्रहण करते हैं। यहाँ कर्म के मूल में उद्देश्य-पूर्ति की जिज्ञासा तो रहती है परंतु फलासक्ति नहीं।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

- **सच्चा वैराग्य** – सच्चा वैराग्य विषयों के बाह्य त्याग में नहीं, बल्कि भोग-विलास के पदार्थों के प्रति मोह न रखने में है। योगी जीवन की सभी परिस्थितियों में स्थिर बुद्धि वाला होकर अंदर से विरक्त हुआ कर्तव्य रूपी कर्म के पथ पर चलता रहता है।

1.2 आत्म-प्रेरणा और चरित्र निर्माण

द्वितीय मंत्र में स्पष्ट किया गया है कि कर्तव्य करते हुए जीने की इच्छा ही साधना है। जो मनुष्य अपने कर्तव्यों का पालन करते हुएए उच्चतर उद्देश्य की पूर्ति के लिए जीते हैं, वे कर्मों से प्राप्त बंधनकारी संवेदन से मुक्त होने लगते हैं।

- साधना का संबंध केवल अंतःकरण से ही नहीं, अपितु इंद्रिय- नियंत्रण और व्यवहार की शुद्धता से भी है।
- चरित्र निर्माण का मुख्य साधन आत्म-प्रेरणा है; साधक को अपने अंतःकरण के अनुरूप ही व्यवहार करना चाहिए।
- आत्मा के प्रतिकूल कर्मों को निषिद्ध कहा गया है, और जो अनैतिकताए स्वार्थए अहंकार और भोग-आसक्ति से प्रेरित होकर कार्य करते हैं, उन्हें '*असुर*' कहा गया है।

1.3 ब्रह्मविद्या का फल

तृतीय मंत्र मेंए जिसे ब्रह्म स्वरूप का ज्ञान हो जाता हैए वह जीवन के सभी कष्टों से मुक्त हो जाता है। यह मुक्ति उसी साधक को प्राप्त होती है जो निष्काम भाव से अपने कर्मों को करता रहता है। ऐसे साधक अपने संचित शुभकर्मों के आधार पर पुनर्जन्म में भी अपने अपूर्ण कर्तव्यों की पूर्ति करते हुए निष्काम कर्म के दीर्घ पथ पर अग्रसर होते हैं और अंततः मुक्त हो जाते हैं, क्योंकि आत्मा अपने में स्वच्छ, निर्मल और सदैव उपलब्ध है।

अतः ब्रह्मविद्या की शिक्षा यही है—सब में एक ही ईश्वर को देखना, त्यागपूर्वक भोगों का प्रयोग साधना के लिए करना और अन्य के धन, संपत्ति एवं अधिकारों पर लालच न करना। यही आचरण मानव समाज को उन्नति के मार्ग की ओर अग्रसर करता है और ज्ञान–कर्म के सम्यक् संतुलन को स्थापित करता है।

2. ब्रह्मविद्या के सिद्धांतों की स्थापना – *ईशोपनिषद् मंत्र 4-8)*

ईशोपनिषद् के मंत्र 4-8 ब्रह्मविद्या के केंद्रीय सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हैं। यहाँ आत्मा (ब्रह्म) के वास्तविक स्वरूप और उस ज्ञान को जीवन में उतारने वाले योगी की दृष्टि का वर्णन है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

2.1–2.2 ब्रह्म (आत्मा) का स्वरूप: गतिए स्थिरता और सर्वव्यापकता

- *अनेजदेकं मनसो जवीयो*'—आत्मा अजर, अमर, अविनाशी और सर्वव्यापी है। वह स्वयं गतिमान न होते हुए भी सृष्टि की समस्त गति का मूल है। विज्ञान जिस ऊर्जा की बात करता है, ब्रह्म वही मूल शक्ति है, जिसके कारण स्थूल वस्तु सूक्ष्म और सूक्ष्म वस्तु स्थूल रूप धारण कर सकती है।
- पंचम मंत्र में कहा गया है कि यह ब्रह्म अति निकट होते हुए भी दूर है और दूर होते हुए भी अति निकट है। वह संपूर्ण ब्रह्मांड के अंदर और बाहर दोनों में व्याप्त है। यह इंद्रियों से परे ऐसा सत्य हैए जिसे केवल अंतर्मुखी चेतना और निर्मल बुद्धि द्वारा ही जाना जा सकता है।

2.3–2.4 योगी की ब्रह्म-दृष्टि और मोक्ष-सिद्धांत

- छठा मंत्र बताता है कि सच्चा योगी संपूर्ण विश्व को परमेश्वर में और परमेश्वर को संपूर्ण विश्व में देखता है। इस ब्रह्म-स्थिति में उसके लिए समस्त विश्व परमात्मा का ही विस्तार हो जाता है।
- सातवें मंत्र के अनुसार, जो साधक इस समत्व-दृष्टि को प्राप्त कर लेता हैए वह मोह और शोक से मुक्त हो जाता है। मोह और शोक दोनों ही द्वैत की भावना से उत्पन्न होते हैंय अद्वैत की दृष्टि से इनमें भेद मिट जाता है।

2.5 साधना का अनिवार्य सिद्धांत: चित्त का संयम

ईशोपनिषद् के आठवें मंत्र में ब्रह्मविद्या की प्राप्ति हेतु आवश्यक मानसिक एवं आध्यात्मिक अनुशासन बताए गए हैं रू.

- **शरीर और इंद्रिय निग्रह** – साधना के लिए शरीर का स्वस्थ होना तथा इंद्रियों का निग्रह आवश्यक है।
- **ध्यान और जप** – बुद्धि की पवित्रता के लिए ध्यान और जप का विशिष्ट महत्व हैय जप में शब्द से अधिक भाव और तत्व पर ध्यान देने से मन की चंचलता स्थिर होने लगती है।
- **सतत् ईश्वर चिंतन** – आत्मिक विकास के लिए व्यवहार में निरंतर ईश्वर का चिंतन साधक को सत्कर्म के लिए प्रेरित करता है।

इस प्रकार, यह द्वितीय भाग ब्रह्म (अद्वैत) की परम स्थिति तक पहुँचने के लिए आवश्यक आंतरिक अनुशासन और मानसिक–आध्यात्मिक तैयारी को अनिवार्य सिद्धांतों के रूप में प्रस्तुत करता है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

3. ब्रह्मविद्या के साधनों का विवेचन *(ईशोपनिषद् मंत्र 9-14)*

तृतीय भाग में ईशोपनिषद् विद्या (ज्ञान) और अविद्या (कर्म/उपासना) के गूढ़ रहस्यों का वर्णन करता है।

3.1 विद्या और अविद्या का समन्वय

यहाँ अविद्या से तात्पर्य मिथ्या ज्ञान या केवल बाह्य परिवर्तनशील तत्त्वों से युक्त रहने वाली दृष्टि से है। केवल कर्म में रत रहकर भक्ति और आत्मज्ञान से विमुख होना भी अविद्या का ही एक रूप है जबकि केवल ज्ञान में लीन होकर कर्म से पलायन भी पूर्णता को प्राप्त नहीं करता।

- अविद्या के माध्यम से मनुष्य सांसारिक व्यवहार कौशल और जीविका का ज्ञान प्राप्त करता है।
- विद्या के माध्यम से आत्मा और परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होता है जो मुक्ति की ओर अग्रसर करता है।

स्थूल (अविद्या/कर्म) से सूक्ष्म (विद्या/आत्मज्ञान) तक की यात्रा में दोनों का समन्वय आवश्यक है। केवल असंभूति (प्रकृति देवता भौतिक रूप) की उपासना अंधकार में रखती है और केवल संभूति (ब्रह्म) में लीन होकर कर्म-त्याग भी गहरे अंधकार तक ले जा सकता है। दोनों का सम्यक् संतुलन ही पूर्ण जीवन की कुंजी है।

3.2 साधना की अंतःयात्रा - विवेक और विरक्ति

- प्रारंभिक अवस्था में साधक को अनावश्यक तर्क-वितर्क और वाद-विवाद से बचकर तप स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान के अभ्यास पर ध्यान देना चाहिए।
- कर्म भक्ति और ज्ञान—तीनों मार्ग परमतत्त्व के साक्षात्कार के साधन हैं; इनके रहस्य तब अनावृत होते हैं जब साधक पूर्ण श्रद्धा और निरंतर साधना सहित आगे बढ़ता है।
- यह साधना यात्रा शरीर से इंद्रिय इंद्रियों से मन मन से आगे बुद्धि और अंततः आत्मा के साम्राज्य तक ले जाती है जहाँ से मृत्यु-भय पर विजय की प्रक्रिया आरंभ होती है।
- जब साधक सुख–दुःख का सूक्ष्म निरीक्षण कर लेता है तो महान सुख की पिपासा निम्न कोटि के सुखों के त्याग (विरक्ति) की भावना को दृढ़ करती है। ममत्व का अभाव विरक्ति के भाव को स्थिर करता है।

3.3 आत्म-साक्षात्कार के चार विशिष्ट साधन

इन मंत्रों में आत्म-साक्षात्कार के लिए चार प्रमुख साधन उभरकर आते हैं :.

- **ध्यान** – मन को एकाग्र विशुद्ध एवं अंतर्मुख कर समाधि का आनंद प्राप्त करना।
- **ब्रह्मचर्य** – मन, वचन और कर्म की समस्त शक्तियों को आत्म-प्राप्ति के लिए नियोजित करना।
- **समष्टि साधना** – मन, वचन और कर्म की सामूहिक शुद्ध साधना आत्मानुभूति में समर्थ होती है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

- **प्राण-साधना** – प्राण–अपान की गतियों के नियमन द्वारा जीवित अवस्था में ही मृत्यु के रहस्यों का अनुभव कर मृत्यु-भय से मुक्त होना।

इसके साथ ही श्रवणए मनन और निदिध्यासन के द्वारा बुद्धि साक्षात्कार-सामर्थ्य अर्जित करती है। जब साधक इंद्रियों को संयमित कर मन को हृदय प्रदेश में स्थिर करता है, जप और ध्यान द्वारा 'मधु-बिंदु' का अनुभव करता है, तब असीम आनंद की अनुभूति होती है और मन आत्मा के समक्ष प्रणिपात कर देता है।

4. ब्रह्मविद्या के फल और मृत्यु-दर्शन का अध्ययन *(ईशोपनिषद् मंत्र 15-18)*

ईशोपनिषद् के अंतिम चार मंत्र ब्रह्मविद्या की साधना का फल और मृत्यु के रहस्य का उद्घाटन करते हैं।

4.1 सत्य का आवरण और प्रलोभनों का त्याग

पंद्रहवें मंत्र में कहा गया है कि *हिरण्येन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्*'—सत्य का मुख स्वर्णमय पात्र से ढका हुआ है। यह स्वर्णमय पात्र जगत के आकर्षक प्रलोभनों और माया का प्रतीक है। जो साधक इन्हीं आकर्षणों में बंधे रहते हैंए वे सत्य-दर्शन में असमर्थ होते हैं। साधना-पथ पर अग्रसर होकरए माया के आकर्षणों का त्याग करने वाला साधक ही सत्य और ब्रह्मज्ञान की ओर बढ़ पाता है। जीवित अवस्था में ही सर्वत्र आत्मा को देखने का अभ्यास मृत्यु-भय से मुक्त होने का प्रथम चरण है।

4.2 ब्रह्म-ऐक्य भाव और साधक के लक्षण

सोलहवें मंत्र में साधक परमात्मा से जीव के ऐक्य-भाव की प्रार्थना करता है। इस ऐक्य-भाव को धारण करने के लिए साधक में निम्न लक्षण अपेक्षित हैं रू.

- दूसरों का पोषक और कल्याणकर्ता होनाए
- ईश्वर पर अटूट श्रद्धा रखनाए
- परिश्रमपूर्वक साधना द्वारा अद्वितीय (अद्वैत-दृष्टि संपन्न) होनाए
- न्याय–अन्याय की सूक्ष्म पहचान रखनाए
- सूर्य की भाँति प्रकाशित होते हुए भी निर्लिप्त रहनाए
- संयमित जीवन जीना और सत्य-प्राप्ति हेतु अपनाए गए नियमों को जीवन-स्वरूप बना लेना।

4.3 अंत समय का स्मरण और कर्मों का चित्र

सत्रहवें मंत्र में उपदेश है कि साधक को जीवनकाल में इतनी साधना कर लेनी चाहिए कि अंतिम विदाई की घड़ी में परमात्मा का स्मरण स्वाभाविक और निर्व्याज रूप से हो सके।

- मृत्यु-शैया पर मानव के सामने उसके समस्त कर्मों और संस्कारों के चित्र उभरते हैं।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

- जो मनुष्य संसार के मोह को छोड़ चुका होता हैए वह मृत्यु के आगमन को भी आनंद के रूप में अनुभव कर सकता हैय इसके विपरीत, स्वार्थ और भोग-आसक्ति से बँधा व्यक्ति वेदना का अनुभव करता है।
- इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य अपनी आनंदमय या वेदनामय स्थिति का निर्माता स्वयं है।

4.4 अग्नि मार्ग और सुपथ की प्रार्थना

अठारहवें मंत्र में मृत्यु-शैया पर लेटा साधक अंतिम प्रार्थना करता है— *अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्श्*— हे अग्नि! हमें सुपथ (सत्य एवं ज्ञान के मार्ग) से ले चलो।

- *वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्श्*—शरीर पंचभूतों में विलीन हो जाता है, किंतु आत्मा अविनाशी है।
- मृत्यु के पश्चात सूक्ष्म शरीर सुपथ (प्रकाश/ज्ञान का मार्ग) या कुपथ (अंधकार/अज्ञान का मार्ग) से गुजरता है; अग्नि यहाँ ज्ञान-स्वरूप परमात्मा तथा मार्गदर्शक शक्ति का प्रतीक है।

अंततः साधक की कामना यही रहती है कि परमेश्वर उसे शुभ कर्मों के मार्ग से अविनाशी ब्रह्म की ओर ले जाए।

निष्कर्ष :. ईशोपनिषद् अपने अठारह मंत्रों में जीवन-दर्शन की ऐसी समन्वित दृष्टि प्रस्तुत करता हैए जिसमें जीवन को जन्म–मृत्यु के सीमित क्रम के रूप में नहींए बल्कि ब्रह्म से आविर्भाव और पुनः ब्रह्म में स्थित होने वाली चक्रवत् यात्रा के रूप में समझाया गया है। उपनिषद् भोग–त्याग, ज्ञान–कर्म तथा विद्या–अविद्या के संतुलन को ही ब्रह्मविद्या का सार मानते हुए निष्काम कर्मएए अभेद दृष्टि और त्यागपूर्वक उपभोग की आदर्श जीवन-पद्धति प्रतिपादित करता हैए जो व्यक्ति और समाज दोनों के उत्थान का आधार बनती है।

ध्यान, जप, ब्रह्मचर्य, प्राण-साधना और इंद्रियनिग्रह जैसे आध्यात्मिक अनुशासन ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के अनिवार्य साधन हैंए जो साधक को स्थूल से सूक्ष्म और अंततः आत्मस्वरूप की अनुभूति तक ले जाते हैं। मृत्यु को अंत न मानकरए अमरत्व की ओर संक्रमण के रूप में समझने का संदेश — *हिरण्येन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्'* और *अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्'* — मनुष्य को निर्भयताए शांति और सत्य-दर्शन की ओर प्रेरित करते हैं।

इस प्रकार ईशोपनिषद् आधुनिक मानव के लिए एक दिशा-सूचक प्रकाशस्तंभ की भाँति हैए जो बाह्य-केन्द्रित जीवन से हटाकर अंतर्मुखी साधना और आत्म-मीमांसा की ओर ले जाता हैए जहाँ से जीवन और मृत्यु दोनों का रहस्य अमृतत्व के आलोक में स्पष्ट होकर प्रकट होता है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

संदर्भ सूची

1. ईशावास्योपनिषद् (शंकर भाष्य सहित), आदि शंकराचार्य, अद्वैत आश्रम — कोलकाता — 2010
2. ईशोपनिषद् : मध्व भाष्यए श्री मध्वाचार्य, श्रीकृष्ण मठ प्रकाशन — उडुपि — 2008
3. ईशोपनिषद् : हिंदी टीका व व्याख्या, स्वामी चिन्मयानंद, चिन्मय मिशन — मुंबई — 2014
4. ईशोपनिषद् : भावार्थ व टीकाए पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, गायत्री तपोभूमि, शांतिकुंज — हरिद्वार — 2012
5. वेदांत दर्शन (ईशावास्योपनिषद् सहित), स्वामी विवेकानंद संकलन, अद्वैत आश्रम कोलकाता, 2007
6. ईशोपनिषद् (मूल पाठ व हिंदी टीका सहित), गीता प्रेस संपादित, गीताप्रेस गोरखपुर , 2019
7. उपनिषदों का दार्शनिक अध्ययन, डा. भगवानदास, भारतीय विद्या भवन, मुंबई, 2005